वैदों की विश्वकल्याण की भावना

विश्व-कल्याण :

योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तस्य त्वं प्राणेना प्यायस्व ।

आ वयं प्यासिषीमहि गोभिरश्वै : प्रजया पशुभिर्गृहैर्धनेन ।।

—(अथर्व० ७/८१/५)

भावार्थ—हे परमात्मन् ! जो हमसे वैर-विरोध रखता है और जिससे हम शत्रुता रखते हैं तू उसे भी दीर्घायु प्रदान कर। वह भी फूले-फले और हम भी समृद्धिशाली बनें। हम सब गाय, बैल, घोड़ों, पुत्र, पौत्र, पशु और धन-धान्य से भरपूर हों। सबका कल्याण हो और हमारा भी कल्याण हो।

विश्व-प्रेम :

वेद हमें घृणा करनी नहीं सिखाता। वेद तो कहता है—

उत देवा अवहितं देवा उन्नयथा पुन : ।

उतागश्चक्रुषं देवा देवा जीवयथा पुन : ।।

—(अथर्व० ४/१३/१)

भावार्थ—हे दिव्यगुणयुक्त विद्वान् पुरुषो ! आप नीचे गिरे हुए लोगों को ऊपर उठाओ। हे विद्वानों ! पतित व्यक्तियों को बार-बार उठाओ। हे देवो ! अपराध और पाप करनेवालों को भी ऊपर उठाओ। हे उदार पुरुषों ! जो पापाचरणरत हैं, उन्हें बार-बार उद्बुद्ध करो, उनकी आत्मज्योति को जाग्रत् करो।

यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानत : ।

तत्र को मोह : क : शोक एकत्वमनुपश्यत : ।।

—(यजु० ४०/७)

भावार्थ—ब्रह्मज्ञान की अवस्था में जब प्राणीमात्र अपनी आत्मा के तुल्य दिखने लगते हैं तब सबमें समानता देखने वाले आत्मज्ञानी पुरुष को उस अवस्था में कौन-सा मोह और शोक रह जाता है, अर्थात् प्राणिमात्र से प्रेम करनेवाले, प्राणिमात्र को अपने समान समझनेवाले मनुष्य के सब शोक और मोह समाप्त हो जाते हैं।

अद्या मुरीय यदि यातुधानो अस्मि यदि वायुस्ततप पूरुषस्य ।

—(अथर्व० ८/४/१५)

भावार्थ—यदि मैं प्रजा को पीड़ा देनेवाला होऊँ अथवा किसी मनुष्य के जीवन को सन्तप्त करुँ तो आज ही, अभी, इसी समय मर जाऊँ।

यथा भूमिर्मृतमना मृतान्मृतमनस्तरा ।

यथोत मम्रुषो मन एवेर्ष्योर्मृतं मन : ।।

—(अथर्व० ६/१८/२)

भावार्थ—जिस प्रकार यह भूमि जड़ है और मरे हुए मुर्दे से भी अधिक मुर्दा दिल है तथा जैसे मरे हुए मनुष्य का मन मर चुका होता है उसी प्रकार ईर्ष्या, घृणा करनेवाले व्यक्ति का मन भी मर जाता है, अत : किसी से भी घृणा नहीं करनी चाहिए।

ब्रह्म और क्षात्रशक्ति :

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरत : सह ।

तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवा : सहाग्निना ।।

—(यजु० २०/२५)

भावार्थ—जहाँ, जिस राष्ट्र में, जिस लोक में, जिस देश में, जिस स्थान पर, ज्ञान और बल, ब्रह्मशक्ति और क्षात्रशक्ति, ब्रह्मतेज और क्षात्रतेज संयुक्त होकर साथ-साथ चलते हैं तथा जहाँ देवजन=नागरिक राष्ट्रोन्नति की भावनाओं से भरपूर होते हैं, मैं उस लोक अथवा राष्ट्र को पवित्र और उत्कृष्ट मानता हूँ।

चरित्र-निर्माण :

प्र पदोऽव नेनिग्धि दुश्चरितं यच्चचार शुद्धै : शपैरा क्रमतां प्रजानन् ।

तीर्त्वा तमांसि बहुधा विपश्यन्नजो नाकमा क्रमतां तृतीयम् ।।

—(अथर्व० ९/५/३)

भावार्थ—हे मनुष्य ! तूने जो दुष्ट आचरण किये हैं उन दुष्ट आचरणों को अच्छी प्रकार दो डाल। फिर शुद्ध निर्मल आचरण से ज्ञानवान् होकर आगे बढ़। पुन : अनेक प्रकार के पापों और अन्धकारों को पार करके ध्यान एवं योग-समाधि द्वारा अजन्मा ब्रह्म के दर्शन करता हुआ शोक और मोह आदि से पार होकर परम आनन्दमय मोक्षपद पर आरुढ़ हो।

प्रभु-प्रेम :

महे चन त्वामद्रिव : परा शुल्काय देयाम् ।

न सहस्राय नायुताय वज्रिवो न शताय शतामघ ।।

—(ऋ० ८/१/५)

भावार्थ—हे अविनाशी परमात्मन् ! बड़े-से-बड़े मूल्य व आर्थिकलाभ के लिए भी मैं कभी तेरा परित्याग न करुँ। हे शक्तिशालिन् ! हे ऐश्वर्यों के स्वामिन् ! मैं तुझे सहस्र के लिए भी न त्यागूँ, दस सहस्र के लिए भी न बेचूँ और अपरमित धनराशि के लिए भी तेरा त्याग न करुँ।

?सुपथ-गमन :

मा प्र गाम पथो वयं मा यज्ञादिन्द्र सोमिन : ।

मान्य स्थुर्नो अरातय : ।।

—(अथर्व० १३/१/५९)

भावार्थ—हे इन्द्र ! परमेश्वर ! हम अपने पथ से कभी विचलित न हों। शान्तिदायक श्रेष्ठ कर्मों से हम कभी च्युत न हों। काम, क्रोध आदि शत्रु हमपर कभी आक्रमण न करें।

मधुर-भाषण :

वाचं जुष्टां मधुमतीमवादिषम् ।

—(अथर्व० ५/७/४)

हम अतिप्रिय और मीठी वाणी बोलें।

होतरसि भद्रवाच्याय प्रेषितो मानुष : सूक्तवाकाय सूक्ता ब्रूहि ।

—(यजु० २१/६१)

भावार्थ—हे विद्वन् ! उपदेष्ट : ! तू कल्याणकारी उपदेश के लिए भेजा गया है। तू मननशील मनुष्य बनकर भद्रपुरुषों के लिए उत्तम उपदेश कर।

दिव्य-भावना :

यो न : कश्चिद्रिरिक्षति रक्षस्त्वेन मर्त्य: ।

स्वै : ष एवै रिरिषीष्ट युर्जन : ।।

—(ऋ० ८/१८/१३)

भावार्थ—जो मनुष्य अपने हिंसक स्वभाव के वशीभूत होकर हमें मारना चाहता है वह दु :खदायी जन अपने ही आचरणों से—अपनी टेढ़ी चाल और बुरे स्वभाव से स्वयं ही मर जाता है, फिर मैं किसी को क्यों मारूँ।

पाठकगण ! उपर्युक्त मन्त्रों में कितनी उच्च और उदात्त भावनाएँ हैं। संसार के सारे साहित्य को पढ़ लीजिए, इनसे सुन्दर और मनोरम विचार आपको कहीं नहीं मिलेंगे।

साभार :

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती द्वारा लिखित पुस्तक 'वैदिक उद्यात भावनाएँ' से

प्रस्तुतकर्ता : भूपेश आर्य